International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 302-305

सांख्य दर्शन में 25 तत्त्व

रीना देवी

एम.ए. द्वितीय वर्ष, चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द, हरियाणा, भारत।

सारांश
सांख्य दर्शन के अध्ययन की आवश्यकता हमें इसलिए है ताकि हम अपने बारे में जान सकें, समझ सकें कि हमारा निर्माण किन–किन तत्वों से तथा किसके लिए हुआ है। इसमें हम अपने शरीर तथा सांख्य के पच्चीस तत्वों का अध्ययन विस्तारपूर्वक करेंगे।

मूल शब्द : सांख्य दर्शन, तत्त्व, शरीर।

1. प्रस्तावना
सांख्य दर्शन के रचियता महर्षि कपिल थे। सांख्य दर्शन दो तत्वों को अनादि और नित्य मानता है। प्रथम पुरुष (आत्मा, जीवात्मा) तथा दूसरा प्रकृति।
इसमें पुरुष को चेतन, अविकारी, ज्ञानस्वरूप और संख्यां में अनेक माना जाता है। इसके विपरीत प्रकृति को विकारी और संख्यां में एक स्वीकार किया गया है। इन दोनों तत्वों के अतिरिक्त सांख्य दर्शन 23 विकारों को मानता है। इस प्रकार कुल 25 तत्वों का वर्णन मिमांसा का आधार है। प्रकृति और उसके 23 विकार तथा अपने सुख स्वरूप को जानने पर पुरुष मोक्ष को प्राप्त करता है। तत्वों की संख्या गिनने के आधर पर इसका नाम सांख्य पड़ा।

2. सांख्य का अर्थ
सांख्य नाम का रहस्य इसके विशिष्ट सिद्धान्त में छिपा हुआ है। प्रकृति तथा पुरुष के पारस्परिक विभेद को न जानने से दुखमय जगत् की सत्ता है, परन्तु जिस समय पुरूष के विशुद्ध स्वरूप का ज्ञान उत्पन्न हो जाता है उसी समय उसके लिए दुख की आत्यान्तिक निवृति हो जाती है।
विवेक ज्ञान कारण है तथा दुख निवृति कार्य है। इस ज्ञान की परिभाषिक संज्ञा है– "पुरुषान्यतारूयति या प्रकृति–पुरूष विवेक। इसी का दूसरा नाम है सांख्य=प्रकृति–सम्यक ख्याति=सम्यग् ज्ञान=विवेक ज्ञान।
सांख्य दर्शन में सांख्य के नितान्त मूलभूत सिद्धान्त होने के कारण इस दर्शन का नाम सांख्य पड़ा।
महाभारत में भी सांख्य शब्द की यही प्रमाणित व्याख्या की गई है–

संख्यां प्रकुवते चैव प्रकृति।
तत्त्वमि च चतुर्विंशत् तेन संख्याः प्रकीर्तिताः।।
(महाभारत)

कुछ लोग तत्वनिर्णय के कारण गिनती के अर्थ में व्यवहृत होने वाले 'संख्या' शब्द से इसका सम्बन्ध जोड़ते है, परन्तु यह व्याख्या उतनी प्रमाणिक नहीं प्रतीत होती जितनी पूर्वोक्त व्याख्या।

दोषाणां च गुणानां च प्रमाणं प्रविभागतः
कचिंदर्शमभिप्रेत्य सा संख्येत्युपधर्यताम्।।
(महाभारत)

किसी वस्तु के विषय में तद्गत दोषों तथा गुणों की छानबीन करना 'संख्या' कहलाता है। "संख्या" का अर्थ–आत्मा के विशुद्ध रूप का ज्ञान भी किया गया है।

3. सांख्य का उद्गम तथा विकास
सांख्य नितान्त प्राचीन दर्शन है। सांख्य के सिद्धान्तों की उपलब्धि उपनिषदों में होती है। यद्पि 'सांख्य' शब्द 'योग' शब्द के साथ श्वेताश्वर उपनिषद में प्रथमतः उपलब्ध होता है तथापि इसके अनेक माननीय सिद्धान्त उससे से भी प्राचीन से बीजरूप से मिलते हैं। सत्व, रज, तम–यह त्रिागुण का सिद्धान्त प्रथमतः छान्दोग्य में दृष्टिगोचर होता है।
छान्दोगय का कथन है कि अग्नि का रूप लाल है। जल का शुक्ल तथा पृथ्वी का कृष्ण। इस सृष्टि में ये तीनों ही रूप कारणभूत हैं। प्रकृति की कल्पना में श्वेताश्वतर ने इन्हीं वर्णों का उपयोग किया है।
प्रकृति एक है, अजा–उत्पन्न न होने वाली है, लोहित, कृष्ण तथा शुक्ल रूपों को धरण करने वाली है। 'इन्द्रियों के बढ़कर अर्थ, अर्थ से बढ़कर मन, मन से बढ़कर बुद्धि, बुद्धि से बढकर महत्, महत से बढकर अव्यक्त तथा अव्यक्त से बढकर पुरूष, पुरूष से बढ़कर अन्य कोई भी वस्तु नहीं होती। 'कई प्रश्नोपनिषद' में पुरूष की सोलह कलाओं का वर्णन मिलता है। जो सांख्य के सूक्ष्म शरीर की कल्पना का मूलाधर है।
श्वेताश्वतर' उपनिषद तो सांख्य सिद्धान्तों का भण्डार है।

अजामेकां लोहितकृष्णशुक्लां।
बहतिः प्रजाः सृजमानां सरूपाः।।
(श्वेताश्वतर उपनिषद)

ईश्वर प्रधान या प्रकृति, क्षेत्रज्ञ या जीवों का तथा गुणों का अधिपति है। जिस प्रकार मकडी अपने शरीर से उत्पन्न होने वाले तन्तुओं से जाला जनती है, उसी प्रकार ईश्वर प्रकृतिजन्य गुणों के द्वारा अपने को प्रकटित करता है। प्रकृति ईश्वर की मायाशक्ति है, इस लिये प्रकृति का अधिपति महेश्वर मायी कहलाता है।
तन्मात्रा, त्रिगुण तथा प्रकृति–पुरूष विवेक के सिद्धात मश्रायणी उपनिषद् (द्वितीय तथा तृतीय पाठक) में संकेतित किए गए हैं।

4. काल विभाग
सांख्य दर्शन के ऐतिहासिक विकास पर दृष्टिपात करने से निम्नलिखित समय–विभाग स्वीकृत किये जा सकते हैं–
1. उपनिषदों तथा भगवद्गीता का सांख्य (1000–800 ई. पूर्व)

इस काल में सांख्य वेदांत के साथ शामिल है तथा ईश्वरवाद का समर्थक है।

2. महाभारत तथा पुराणों का सांख्य (लगभग 200–100 ईसा पूर्व) इस काल में सांख्य वेदांत के सिद्धान्तों से पृथक होकर स्वतंत्र दर्शन के रूप में प्रकट होता है। सांख्य सिद्धान्तों में विशेष विकास दृष्टिपात होता है। चरक के सांख्य की अनेक विशेषताएं–पुरूष की चेतनारहित दशा–महाभारत में में भी उपलब्ध होती है, जिससे चरक पण्यशिख के अनुयायी प्रतीत होते हैं।
3. ब्रह्मसूत्र में निर्दिष्ट तथा सांख्यकारिका में वर्णित सांख्य (300 ई॰ से 300 ई.पू.)। इस काल का सांख्य निश्चितरूपेण निरिश्वरवादी है। प्रकृति तथा पुरूष को अन्तिम तत्व मान कर विश्व की तात्विक व्याख्या की गई है। ईश्वर के लिए इस सांख्य में कोई स्थान नहीं है।
4. विज्ञानभिक्षु का सांख्य (16वीं शती)। विज्ञानभिक्षु एक विशिष्ट मौलिक दार्शनिक थे। उन्होंने सांख्य से निरिश्वरवाद के लांछन को हटाकर पुनः सेश्वरवाद की प्रतिष्ठा की है। विज्ञानभिक्षु ने सांख्य के लुप्त गौरव का पुनः उद्धार किया और उसका वेदान्त के साथ सुन्दर अमन्वय उपस्थित कर उसे महाभारत व्यापकता प्रदान की है।

गुणरत्न ने सांख्य के दो सम्प्रदायों का वर्णन किया है– मौलिक्य तथा उत्तर। मौलिक्य सांख्य में प्रत्येक आत्मा के लिए एक स्वतंत्र प्रधान की कल्पना स्वीकृति की गई है। यह सिद्धान्त चरक–सांख्य से मिलता–जुलता है। अतः महाभारत तथा चरककालीन सांख्य 'मौलिक' सांख्य का प्रतिनिधि प्रतीत होता है। 'उतर' सांख्य–कारिका में वर्णित निरिश्वर सांख्य ही है।

5. सांख्य में त्रिगुण विवेचन

सांख्य में सृष्टि प्रकृति को समझाते हुए कहा गया है कि प्रकृति ही जगत का प्रधान या मुख्य कारण है, सांख्य प्रकृति को त्रिगुणात्मक मानता है अर्थात् सत, रज, तम प्रकृति में है। इन तीन गुणों में परस्पर विरोधी स्वभाव वाला होने पर भी अत्याधिक तालमेल रहता है। इन तीनों गुणों में अलग–अलग विशेषताएं होते हुए भी एक महत्वपूर्ण समानता भी देखने को मिलती है, कि इनमें एक दूसरे को दबाने की सामान्यवृति होती है। एक के बिना दूसरा रह नहीं सकता, यही सृष्टि का सबसे बड़ा हेतु है।

6. उत्पत्ति का सिद्धान्त

प्रलय अवस्था के पश्चात् सृष्टि प्रारम्भ में प्रकृति पुरूष के सम्पर्क में आती है। जिससे उसके गुणों की सभ्यता भंग हो जाती है। इसमें सबसे पहले सत्व गुण की वृद्धि होती है, जिससे महत (बुद्धि) की उत्पत्ति हो रही है। 'महत्' से अहंकार की उत्पत्ति होती है। सात्विक अहंकार से फिर एक मन, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कमेन्द्रियाँ व11 तत्वों की भी उत्पत्ति होती है। 'तामसिक' तत्व से 5 तन मात्राओं की उत्पत्ति होती है। 5 तन्मात्राओं से पांच महाभुतों की उत्पत्ति हुई।

सर्वप्रथम सप्त तन्मात्रा से प्रकाश महाभूत की उत्पत्ति होती है। सप्त तन्मात्रा सहायक का कार्य करती है। वायु के साथ शब्द और स्पर्श, इसके पश्चात् रूप तन्मात्रा से अग्नि महाभूत की उत्पति होती है। पूर्व की दो तन्मात्राएं भी गौण रूप में रहती हैं। जिससे अग्नि में शब्द, रूप, स्पर्श ये तीन गुण होते हैं। इसके बाद इस तन्मात्रा से जल की उत्पत्ति होती है। पूर्व की तन्मात्राएं इसमें गौण रूप से रहती हैं, जिसके फलस्वरूप जल के चार गुण हैं। रस, रूप, शब्द, स्पर्श, गंध तन्मात्रा से पृथ्वी के तत्व की उत्पति होती है। पूर्व की चारों तन्मात्राएं इसमें सहायक का कार्य करती है। इसलिए पृथ्वी के पांच गुण हेाते हैं। गंध इसका प्रधान गुण है। रस, रूप, स्पर्श, शब्द ये गौण गुण हैं। पृथ्वी सबसे स्थूल महाभूत है। इन पाँचों महाभूतों से सारे दृश्यमान जगत का निर्माण होता है। सांख्य की सृष्टि प्रकृति को निम्नलिखित तालिका से समझा जा सकता है–

तालिका

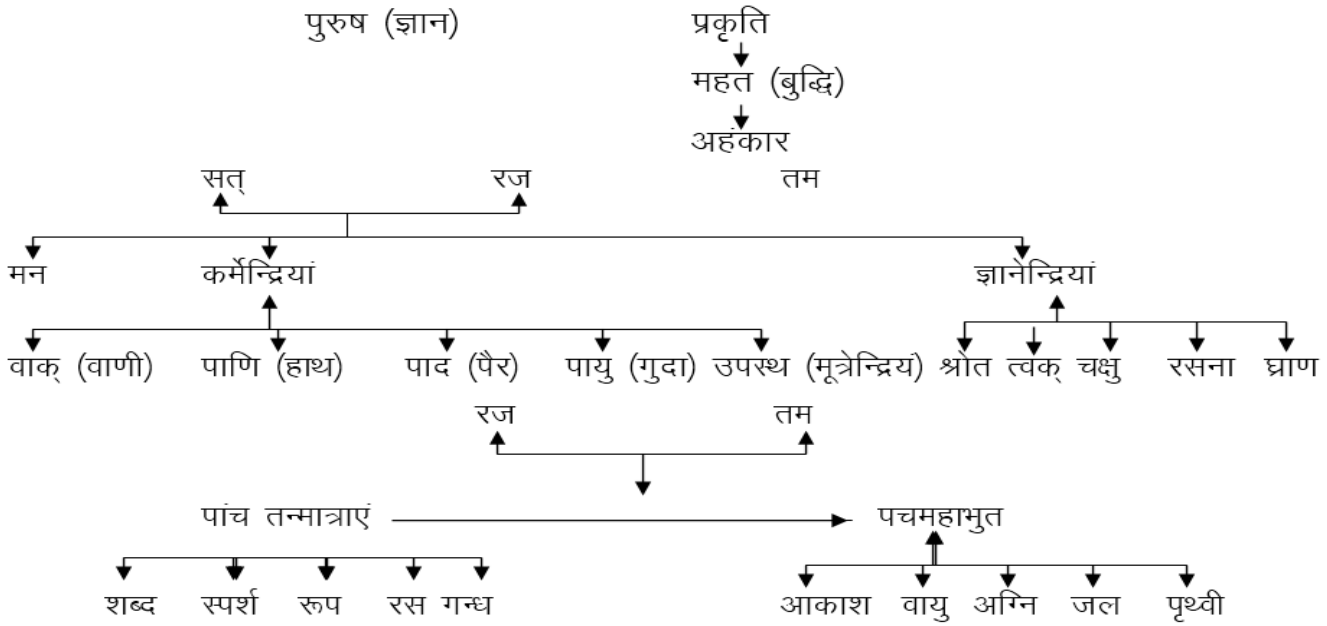

आकृति

तलिका

कर्मेन्द्रियां	ज्ञानेन्द्रियां	पंचतन्मात्राएं	पंचमहाभुत
वाक्	श्रोत्	शब्द	आकाश
पाणि	त्वक	स्पर्श	वायु
पाद	चक्षु	रूप	अग्नि
पायु	रसना	रस	जल
उपस्थ	घ्राण	गन्ध	पृथ्वी

7. सांख्य दर्शन में योग का स्वरूप

सांख्य दर्शन के रचियता महर्षि कपिल मुनि थे। सांख्य और योग दोनों समान हैं, ये एक ही मत की दो शाखाएं है। भगवद्गीताकारक कहते हैं–

सांख्य योगों प्रथमबालाः प्रवदन्ति न पण्डित। (5/4)

अर्थात् :– सांख्य और योग को अलग–अलग जानने वाले पण्डित है, विद्वान लोग दोनों को एक ही जानते हैं। सांख्य के सिद्धान्त पर योग दर्शन की रचना हुई है।

सांख्य दर्शन दो तत्वों को अनादि और नित्य को मानता है। प्रथम पुरूष (आत्मा) तथा दूसरा प्रकृति। इनमें पुरूष को चेतन अविकारी ज्ञान स्वरूप और संख्या में अनेक माना गया है। इसके विपरीत प्रकृति को जड़ विकारी और संख्या में एक स्वीकार करता है। इन दोनों तत्वों के अतिरिक्त सांख्य दर्शन प्रकृति के 23 विकारों का भी वर्णन करता है।

इस प्रकार कुल 25 तत्व का प्रवेश है। जो (1) प्रधान या प्रकृति, (2) पुरूष, (3) महत या बुद्धि, (4) अहंकार, (5) मनस या मन, (6 से 10) पांच ज्ञनेन्द्रियाँ, (11 से 15) पांच कर्मेन्द्रियां, (16 से 20) पांच तन्मात्राएं या सूक्ष्म भूत तथा (21 से 25) पांच महाभुत कुल 25 तत्व विद्यमान हैं या सांख्य के अर्न्तगत आते हैं।

बाह्यज्ञान का साधन होने के कारण पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ ये दस बाह्यकरण कहलाते हैं। मन, बुद्धि अहंकार ये तीनों भीतरी ज्ञान के साधन होने के कारण अन्तः करण कहलाते हैं।

बाह्य और अन्तः दोनों प्रकार के करणों को मिलाकर कुल त्रयोदश (तेरह) करण होते हैं।

मन और महत् की विशेषता

यहाँ सांख्य में एक जैसे दो तत्व दिखाई पडते हैं। एक बुद्धि या महत् और दूसरा मन या मस्तिष्क। यह मन बुद्धि से प्रथक तत्व है। यह ज्ञानेन्द्रियों और कमेन्द्रियों के बीच सामंजस्य रखते हुए बाह्य जगत से संकेत और सूचनाएँ प्राप्त करता है और अनुभवकर्ता अहंकार को सूचित करता है। सांख्य का यह मन अहंकार का उत्पाद है। खुद भी उत्पादित करने की क्षमता रखता है

लेकिन बुद्धि के बारे में यह कथन उचित नहीं होगा। सांख्य तत्व, बुद्धि स्वयं तो प्रकृति का उत्पाद है, लेकिन वह उत्पादन की दामता से हीन है।

हमने देखा कि अहंकार से सूक्ष्म और स्थूल भूतों की उत्पत्ति होती है। स्थूल–भूत सूक्ष्म भूतों के विभिन्न योगों से उत्पन्न होते हैं, जैसे शब्द से आकाश का जन्म होता है, शब्द और स्पर्श के योग से वायु या मरूत, रूप से तेज या अग्नि और शब्द, स्पर्श रूप और रस से तेज या अग्नि और शब्द, स्पर्श, रूप और रस से जल की उत्पति होती है। सभी पांच भूतों से महाभूत क्षिति या पृथ्वी की उत्पत्ति होती है।

इन्द्रिय और मन का सम्पूर्ण व्यापार बुद्धि के लिए तथा बुद्धि का सम्पूर्ण व्यापार पुरूष के लिए होता है। 'बुद्धि' जिसका स्वरूप ही निश्चयात्मक अथवा अध्यवसायात्मक होता है, प्रत्येक वाणी में विद्यमान रहता है स्वयं को तथा अपने सम्पर्क में आने वाले विषयों को प्रकाशित करती है।

यही बुद्धि अपने 'ज्ञान' रूप भाव के द्वारा पुरूष और प्रकृति की भिन्नता का प्रदर्शन करती है।

8. विकृतियाँ (पुरुष तथा प्रकृति में)

इसमें प्रकृति केवल एक है। जो मूल या प्रधान के नाम से जानी जाती है महत् अहंकार और पंचतन्मात्राएं प्रकृति और विकृति दोनों हैं तथा पंचज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ मन तथा पंचमहाभूत केवल 16 तत्व विकृति हैं। सांख्य की जगत प्रक्रिया पुरूष और प्रकृति का अनादित्व और नियतता तथा पुरूषों की संख्या अनेक होने को योग दर्शन भी ज्यों का त्यों स्वीकार करता है। केवल इतना भेद है कि योग दर्शन इन सामान्य पुरूषों की अपेक्षा एक विशेष पुरूष (ईश्वर) को मानता है। जो क्लेष, कर्म, विपाक से रहित है।

इस प्रकार सांख्य में काफी विकृतियां आई है।

9. त्रिगुणों की विशेषता

सत्व, रजस और तमस् इन तीनों गुणों की साम्यावस्था है, 'मूल–प्रकृति' जिसे 'प्रधान' अथवा अव्यक्त भी कहा जाता है। सत्वगुण एवं तमोगुण दोनों निष्क्रिय हैं, उन्हें क्रियाशील रजोगुण बनाता है। यह दोनों में उत्प्रेरक का कार्य करता है। रसायनशास्त्र में भी दो पदार्थों को क्रियाशील बनाने के लिए उत्प्रेरक का प्रयोग किया जाता है। इन तीनों गुणों में अलग–अलग विशेषताएं होते हुए भी एक महत्वपूर्ण समानता भी देखने को मिलती है।

इनमें एक दूसरे को दबाने की सामान्यप्रवृति रहती है एक के बिना दूसरा नही रह सकता, यही सृष्टि का सबसे बड़ा हेतु है।

सत्व, रजस और तामस इन तीनों गुणों की सामयावस्था 'मूल प्रकृति' जिसे प्रधान अथवा अव्यक्त भी कहा गया है। अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण स्थूल इन्द्रियों में दिखाई नहीं देती।

10. सांख्य दर्शन में चेतना के विकास की प्रणाली

सांख्य दर्शन में चेतना का केन्द्रिय तत्व पुरूष है। यह नित्य मुक्त है, परन्तु अज्ञान के कारण वह स्वयं को अचेतन प्रकृति ये युक्त समझने लगता है। इस कारण वह दुखी रहता है। केवल ज्ञान की प्राप्ति के द्वारा ही वह अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानने में सक्षम हो पाता है। पुरुष को जब यह ज्ञान हो जाता है कि 'मैं' (यह) नहीं हूँ। मैं अचेतन विषय या ज्ञेय नहीं हूँ। मैं जड़ प्रकृति या अन्तः करण नहीं हूँ, मैं बुद्धि में प्रतिबिम्बित चैतन्य नहीं हूँ, (यह) मेरा नहीं है, न 'मैं' अर्थात् जो भी ज्ञेय विषय है, वह मेरा नहीं है। मेरा कुछ नहीं है। मैं ममकार से रहित हूँ कि मैं थी, मैं नहीं हूँ अर्थात् मैं अहंकार में भी नहीं हूँ और यह ज्ञान तत्वाधान से सुदृढ़ हो जाता है और निर्विकल्प अनुभव का रूप ले लेता है।

जहाँ ज्ञातव्य शेष नही रहता, तब इसे 'कैवल्य' या विशुद्ध ज्ञान कहते हैं। यह विशुद्ध चैतन्य पुरूष का स्वरूप है। इस स्वरूप की प्राप्ति हेतु ज्ञान के साधन के रूप में मनन व निधिध्यासन या अष्टांग योग को बताया है। इसके फलस्वरूप पुरूष अपने वास्तविक स्वरूप की अनुभूति कर लेता है। वह चेतना के विकास की सर्वोच्च अवस्था है।

11. मोक्ष की प्राप्ति

पर्याय सांख्य दर्शन पर ईश्वर को न मानने का आरोप लगता है। सांख्य ने ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार नहीं किया। ईश्वर के विषय में सांख्य दर्शन कहता है, 'ईश्वर–असिद्धये' अर्थात् जैसे सामान्य पुरूष लौकिक वस्तुओं का प्रत्यक्ष कर लेता है, उस रूप में ईश्वर को सिद्ध करना असंभव है। शब्दों के माध्यम से ईश्वर की सिद्धि नहीं हो सकती। वह केवल अनुभव (आत्मसाक्षात्कार) का

विषय है। योग दर्शन में ज्ञान को मुक्ति का मुख्य साधन स्वीकार किया गया है। इसके साधक स्थूल पदार्थों से लेकर महत तत्व, सभी पदार्थों को ज्ञान के माध्यम से मथा जाता है। उसे ज्ञान होता है कि ये सब प्रकृति के विकार हैं।

प्रकृति त्रिगुणात्मक है। सुख–दुख का जो अनुभव होता है, वह गुणों का कार्य है। मैं तो केवल शुद्ध तत्व हूँ।

सांख्य और योग दोनों ही दर्शन मुक्ति के अवस्था में पुरूष का प्रकृति का जगत प्रयोजन पुरूष के उपभोग एवं अपवृत मोक्ष के लिए है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सांख्य दर्शन में भोग दर्शन तथा मानव चेतना का तत्व ज्ञान निहित है तथा दोनों का उद्देश्य जीवन का परम लक्ष्य आत्म कल्याण तथा मानव में चेतना का विकास करना है। सभी प्राणियों में चेतना विकसित हो तभी आत्मकल्याण संभव है।

12. निष्कर्ष

अतः हम कह सकते हैं कि पुरुष और प्रकृति को मिलाकर 25 तत्वों से ही हमारे शरीर की उत्पत्ति हुई है तथा इसके पश्चात् हमारे अन्दर मानव चेतना का विकास हुआ है।

जो इन 25 तत्वों को जान लेता है, वह सांख्ययोग में सिद्धि प्राप्त कर लेता है।

हमारा शरीर पंचमहाभूत तत्वों से, पाँच तन्मात्राओं से, पाँच ज्ञानेन्द्रियों से, पांच कर्मेन्द्रियों, मन, बुद्धि तथा अहंकार से बना है। हमें अहंकार को त्याग कर ईश्वर को समर्पित होकर मोक्ष की प्राप्ति कर लेनी चाहिए। आत्मा तथा परमात्मा का मिलन होगा तभी मोक्ष की प्राप्ति होगी। तथा इनके मिलने से मानव शरीर में मानव चेतना का संचार होगा।

13. सन्दर्भ

मानव चेतनाका विकास तथा सांख्य में मानव चेतना को निम्ननिलिखत ग्रन्थों के माध्यम से जाना तथा देखा जा सकता है–

1. डॉ. राधकृष्णन्– भारतीय दर्शन भाग–1, पृ. 331
2. षड्दर्शन समुच्चय कारिका पृ. 99
3. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा– भारतीय दर्शन की रूपरेखा पृ. 155
4. सांख्य सूत्र– 3.20–21
5. साँख्य प्रवचन सूत्रा, वृति–6 : 63
6. साँख्य प्रवचन भाष्य– 6: 63
7. साँख्य प्रवचन सूत्रा– 3:16
8. साँख्य सूत्र वृति– 20 व 22
9. साँख्यसूत्र वृति– 1:96, 97, 106
10. माण्डूक्य कारिका, शांकर भाष्य –3/3
11. माण्डूक्य, शाक्य भाष्य– 1/3/7
12. जदुनाथ सिन्हा– भारतीय दर्शन पृ. 55
13. वाचस्पति गैराला भारतीय दर्शन पृ. 207
14. रामानुज भाष्य– 2/1/15